International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(4): 172-175

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(4): 172-175
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-05-2022
Accepted: 20-06-2022

प्रकाश चन्द
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, पञ्जाब विश्विविद्यालय, चण्डीगढ, पञ्जाब, भारत

Corresponding Author:
प्रकाश चन्द
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, पञ्जाब विश्विविद्यालय, चण्डीगढ, पञ्जाब, भारत

पञ्चतन्त्रगत मानवोपयोगी आचार एवं व्यवहार

प्रकाश चन्द

प्रस्तावना

पञ्चतन्त्र संस्कृत वाङ्मय की एक सुप्रसिद्ध कृति है, जो न केवल भारतवर्ष अपितु सम्पूर्ण विश्व के कथा-साहित्य में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। पञ्चतन्त्र के लेखक विष्णुशर्मा नामक एक ब्राह्मण थे। पञ्चतन्त्र में पाँच तन्त्र अर्थात् पाँच अध्याय होने के कारण ही इसका नाम पञ्चतन्त्र रखा गया है। पशु-पक्षियों की कहानियों के माध्यम से मानव एक नैतिक तथा संस्कारयुक्त जीवन जीने की ओर प्रेरित होता है। पञ्चतन्त्र की रचना ही राजा अमरशक्ति के मूर्खपुत्रों को विनीत एवं शिक्षित करने हेतु हुई है। अतः इसमें मानवोपयोगी आचार एवं व्यवहार का प्राचुर्य है।

पञ्चतन्त्रगत आचार

पञ्चतन्त्रगत आचार के सन्दर्भ में यह कहें कि पञ्चतन्त्र और आचार एक दूसरे के परिपूरक हैं तो भी कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि सम्पूर्ण पञ्चतन्त्र आचार-व्यवहार से परिपूर्ण है। पुनरपि कतिपय आचार विषयक तथ्य यहाँ उपस्थापित किये जा रहे हैं।

वाणी: संस्कारयुक्त वाणी मानव का सबसे बडा आभूषण होता है। वाणी सरल, शुद्ध, मधुर, प्रभावी एवं व्यावहारिक होनी चाहिए। आज समाज में सर्वाधिक कलह का प्रमुख कारण हमारी मर्यादाहीन वाणी है। पञ्चतन्त्र में विष्णुशर्मा वाणी के सदुपयोग का सन्देश देते हुए इंगित किया है कि मानव को अपनी वाणी का प्रयोग उस स्थान पर करना चाहिए जहाँ उसके प्रयोग से कुछ लाभ हो एवं उसके प्रयोग से कोई स्थायी प्रभाव पडता हो। इसी सन्दर्भ में पञ्चतन्त्रकार ने स्पष्ट निर्देश किया कि – जिस प्रकार श्वेत वस्त्र पर पडा हुआ रंग अमिट एवं पूर्ण प्रभावोत्पादक होता है, उसी प्रकार उचित स्थान पर प्रयुक्त वाणी ही सार्थक होती है। यथोक्तं –

> वचस्तत्र प्रयोक्तव्यं यत्रोक्तं लभते फलम्।
> स्थायी भवति चात्यन्तं रागः शुक्लपटे यथा।।[1]

पञ्चतन्त्र की "वाचालरासभ" कथा के अनुसार गधा अपनी वाणी के दोष के कारण मृत्यु को प्राप्त हो गया क्योंकि वह सजातीय वाणी के दोषों को गोपनीयरखने में असमर्थ था।

सुगुप्तं रक्ष्यमाणोऽपि दर्शयन् दारूणं रपुः।
व्याघ्रचर्मप्रतिच्छन्नो वाक्कृते रासभो हतः।।[2]

इस प्रकार एक कुशल मनुष्य गुणयुक्त वाणी का सार्थक प्रयोग करे तो वह विश्व से सम्मान प्राप्त करता है। एतदतिरिक्त अभद्र, मिथ्या एवं अप्रिय बोलने वाला मनुष्य अपयश प्राप्त करता है।

आचार्य सम्मान: पञ्चतन्त्र में गुरु अर्थात् आचार्य के सम्मान का व्यापक वर्णन प्राप्त होता है। ग्रन्थारम्भ में राजा अमरशक्ति, विष्णु शर्मा से कृतज्ञतापूर्ण शब्दों से अपने पुत्रों को नीतिशास्त्र में प्रवीण बनाने का अनुग्रह करता है –

"भो भगवन्! मदनुग्रहार्थमेतानर्थशास्त्रं प्रति द्राग्यथाऽनन्यसदृशान्विदधासि तथा कुरु"।।[3]

आचार्य स्वयं ज्ञान-ज्योति में प्रज्वलित होकर दूसरों को प्रकाशित करते हैं। शिष्य गुरुकुल एवं आश्रमों में रहते हुए संस्कारी व दीक्षित होकर जीवन में सदैव सत्याचारण करते हैं। पञ्चतन्त्र की "दूतीजम्बुकाषाढभूति" कथा में भी गुरु-शिष्य परम्परा की ओर इंगित किया गया है। यथा –

"तच्छ्रुत्वा आषाढभूतिस्तत्पादौ गृहीत्वा सप्रश्रयमिदमाह – भगवन्! तर्हि दीक्षया मेऽनुग्रहं कुरु"।[4]

धर्माचरण: धर्म संस्कृत के उन शब्दों में से है जिसका प्रयोग अनेक अर्थों में होता है। विद्वानों ने धर्म शब्द की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी हैं। पञ्चतन्त्रकार धर्म के तत्त्व का वर्णन करते हुए कहा है कि जो व्यवहार स्वयं को अच्छा न लगे वह व्यवहार दूसरों के प्रति न करना ही धर्म है। निर्देश प्राप्त होता है कि –

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।[5]

तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार मानव के साथ किया गया उचित आचरण उसे आह्लादित कर देता है, उसी प्रकार उसे भी अन्य मानव एवं मानवेतर प्राणियों के साथ करना चाहिए। धर्म के अनेक लक्षण हैं। पञ्चतन्त्र में वर्णित कतिपय धर्म के लक्षणों का यहाँ सूक्ष्म एवं सारभूत रूप में वर्णन किया जा रहा है।

सत्य: सत्य धर्म का आधारभूत तत्त्व है। सत्यरहित धर्म की परिकल्पना सम्भव नहीं है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार सत्य ही नेत्र है।[6] बृहदारण्यकोपनिषद् में सत्य को ही ब्रह्म कहा गया है।[7] इसी प्रकार मनुस्मृति में भी सत्य और प्रिय बोलने की ओर प्रेरित किया गया है।[8] पञ्चतन्त्रानुसार राजाओं, श्रेष्ठजनों एवं देवताओं के समक्ष सूक्ष्म असत्य वाचन करने वाला भी विनाश को प्राप्त हो जाता है। जैसे –

अपि स्वल्पमसत्यं यः पुरो वदति भुभूजाम्।
देवानाञ्च विनश्येत स द्रुतं सुमहानपि।।[9]

अतः सत्य धर्म, तप तथा सकल जगत् का आधार है। धर्मज्ञ जन सत्य को ही अपना धर्म मानते हैं।

अहिंसा: संसार के समस्त प्राणियों को अपना जीवन प्रिय होता है। अतः अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु किसी भी प्राणी का हिंसा करना अधर्म है। महाभारत के अनुसार अहिंसा को परम धर्म एवं परम तप माना गया है।[10]

अहिंसा-पूर्वको धर्मो यस्मात् सद्भिरुदाहृतः।
युकामत्कुणदशादीस् तस्मात् तानपि रक्षयेत्।।[11]

पञ्चतन्त्रकार ने अहिंसा के मार्ग का अनुमोदन करते हुए यूका, मत्कुण तथा मच्छर आदि छोटे जीवों की रक्षा का भी सन्देश दिया है।

व्यसन-त्याग: व्यसनों के प्रति मानव की आसक्ति, मानव को शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से विकृत कर देती है। व्यसन एक रोग के समान है। पूर्व में यह सूक्ष्मावस्था में होता है किन्तु शनै-शनै यह बृहद् रूप धारण कर लेता है। जिसके उपरान्त स्वयं व्यसनी भी इसके आगे रोकने में समर्थ नहीं होता। पञ्चतन्त्र में मद्यपान से होने वाली हानियों के कतिपय लक्षणों का वर्णन करते हुए विष्णुशर्मा ने कहा कि –

वैकल्यं धरणीपातमयथोचितजल्पनम्।
सन्निपातस्य चिह्नानि मद्यं सर्वाणि दर्शयेत्।।[12]

तात्पर्य यह है कि विकलता, पृथ्वी पर गिरना एवं अप्रासङ्गिक बात करना ये सन्निपात के लक्षण हैं, किन्तु मद्यपान करने वाले व्यक्ति में ये तीनों दोष एक साथ प्रकट होते हैं।

पञ्चतन्त्रगत व्यवहार: पञ्चतन्त्र में मानवोपयोगी व्यवहार का सारगर्भित वर्णन पशु-पक्षियों के माध्यम से प्राप्त होता है। पञ्चतन्त्र विश्व में सर्वाधिक प्रिय ग्रन्थ इसलिए भी है क्योंकि इसमें अनेक गम्भीर से गम्भीर विषय को भी सामान्य वन्य प्राणियों के माध्यम से दर्शाया गया है, जो कि सबको रुचिकर लगता है। भाषा-शैली सरल व सुबोध है। इसमें मनुष्य को सामाजिक व्यवहार के प्रति समर्पित होने के निर्देश दिये गये हैं, जो कि विभिन्न उद्धरणों से द्रष्टव्य हैं।

मित्र-व्यवहार: पञ्चतन्त्र के पाँच तन्त्रों में से प्रथम दो तन्त्रों का नाम क्रमशः 'मित्रभेद' एवं 'मित्रसम्प्राप्ति' है। इन तन्त्रों के कथाओं के माध्यम से मित्रव्यवहार का उल्लेख प्राप्त होता है। मित्रसम्प्राप्ति तन्त्र की "वणिक्पुत्र-कथा" में मित्रता का सारगर्भित वर्णन किया गया है –

आपात्काले तु सम्प्राप्ते यन्मित्रं मित्रमेव तत्।।[13]

अर्थात् आपत्ति के समय में जो मित्र बना रहता है तथा मित्र की सहायता हेतु तत्पर रहता है वही सच्चा मित्र कहलाता है। अन्य उद्धरण के माध्यम से भी पञ्चतन्त्रकार ने मित्र की उपयोगिता का उल्लेख किया है।

यन्नम्रं सगुणं चापि यच्चापत्सु न सीदति।
धनुर्मित्रं कलत्रं च दुर्लभं शुद्धवंशजम्।।[14]

दुर्लभ स्त्री तथा कार्मुक के समान विनम्र, सरल, कुलीन एवं आपत्ति में साथ देने वाला मित्र दुर्लभ होता है। अतः मानव को उत्तम मित्रों से मित्रता करनी चाहिए तथा उनके साथ सन्मित्रता निभानी चाहिए।

पारिवारिक व्यवहार: एक खुशहाल परिवार किसी भी व्यक्ति के जीवन की महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति है। समाज में माता-पिता, दादा-दादी और चाचा-चाची आदि मिलकर एक कुशल परिवार का निर्माण करते हैं। पञ्चतन्त्र में पारिवारिक व्यवहार का उल्लेख अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है। पञ्चतन्त्र की "सिंह-श्रृगालपुत्र" कथा में सिंहिनी श्रृगाल शिशु को न मारकर उसे अपने पुत्र के रूप में स्वीकार करती है तथा उसका पालन-पोषण अपने पुत्रों के समान करती है, जिसका निर्देश इस प्रकार है –

तस्मान्ममायं तृतीयः पुत्रो भविष्यति। [15]

इससे बोध होता है कि वन्य-जीवों में भी मानवों के समान परिवार के प्रति स्नेहभाव होता है। राजा प्रजा का पालक होता है तथा सभी प्रजा उस परिवार के सदस्य होते हैं। इसका उद्धरण पञ्चतन्त्र की "ब्राह्मणदम्पती" कथा में प्राप्त होता है, जब राजा ब्राह्मणी को अपनी भगिनी के रूप में स्वीकार कर दो गाँव दान में दे देता है –

त्वं मे भगिनी, ग्रामद्वयं गृहीत्वा भर्त्रा सह भोगान्भुञ्जाना सुखेन तिष्ठ।[16]

समाज में परिवार ही एक ऐसी संस्था है, जहाँ उससे सम्बन्धित प्रत्येक की सामयिक सुविधा एवं भविष्य में उन्नति की पृष्ठभूमि तैयार होती है। अतः पारिवारिक सम्बन्धों को सुदृढ बनाकर एक सुव्यस्थित परिवार की परिकल्पना की जा सकती है।

सामाजिक व्यवहार: समाज का आधार परिवार ही होता है। समाज तभी प्रगति कर सकता है जब उदारता, एकता, दया, सहयोग, परोपकार, नैतिकता एवं सेवा आदि मूल्यों का लोग भलीभाँति आचरण करने में तत्पर हों। एकता समाज को शिथिल नहीं होने देती। पञ्चतन्त्र में भी "चटक-कुञ्जर" कथा में एकता के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है। बहुत से निर्बलों का संघटन भी सबलों पर विजय प्राप्त करवा देता है। चटका, काष्टकूट, मक्षिका तथा मेंढक मिलकर एक दुष्ट बलशाली गज को भी मृत्यु के द्वार पहुँचा देते हैं। यथा किसी एक वृक्ष को पवन भी बलपूर्वक जड से उखाड देती है। यथा –

अथ ये संहता वृक्षाः सर्वतः सुप्रतिष्ठिताः।
न ते शीघ्रेन वातेन हन्यते ह्येकसंश्रयात्।।[17]

अतः जो वृक्ष संश्लिष्ट एवं चारों ओर से पंक्ति बनाकर खडे हैं, वे झँझावातों के द्वारा उखाडे नहीं जा सकते। अतः एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण हेतु एकता का भाव सर्वोपयोगी माध्यम है।

समाज में शोषित और निर्धन प्राणी का सहयोग करना एक आदर्श समाज का परिचायक है। पञ्चतन्त्र में सामाजिक सहयोग के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। मित्रसम्प्राप्ति में चित्रग्रीव नामक कपोत का पूरा परिवार जब जाल में फँस जाता है, तब सभी आपसी सहयोग से उस जाल को उडाकर ले जाते हैं तथा हिरण्यक नामक मूषक उनके जाल को काटकर उन्हें मुक्त होने में सहयोग प्रदान करता है।

"सिंह-श्रृगालपुत्र" कथा में जीवों पर दया करने का सन्देश दिया गया है –

स च मया बालोऽयमिति मत्वा न व्यापादितो विशेषात्स्वजातीयश्च।[18]

सिंह एक मांसाहारी प्राणी होकर भी दया भाव के कारण श्रृगाल शिशु को नहीं मारता। अतः मानव को भी समाज में शोषित मानव एवं मानवेतर जीवों पर दया का भाव रखते हुए उनके सहयोग हेतु तत्पर रहना चाहिए।

पञ्चतन्त्रगत आचार एवं व्यवहार : सामायिक मीमांसा

वर्तमान समय में आचार एवं व्यवहार समाज से लुप्त होते दिखाई दे रहे हैं। क्योंकि हम पाश्चात्य संस्कृति के मोह-पाश में इतने आबद्ध हो चुके हैं कि हमें अपनी संस्कृति एवं मूल्यों की महत्ता का बोध नहीं है। पञ्चतन्त्र भारतीय संस्कृत वाङ्मय की अमूल्य निधि है। इसमें वर्णित पशु-पक्षियों की कथाओं के माध्यम से आचार एवं व्यवहार का बोध सुगमतया सम्भव है। वर्तमान में इसकी महत्ता इसी से प्रतिपादित हो जाती है कि इसकी अनेक कथाओं को विभिन्न विद्यालयों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है। परञ्च केवल विद्यालय के ऊपर निर्भर रहकर स्वकर्त्तव्यों से विमुख हो जाना भी न्यायोचित नहीं है। सर्वप्रथम परिवार से आचार एवं व्यवहार का ज्ञान प्राप्त होता है। उसके बाद समाज के साथ-साथ व्यक्ति शनैः-शनै इसे जीवन में चरितार्थ करता है। अतः पञ्चतन्त्रगत आचार एवं व्यवहार के मूल्यों का अध्ययन समाज के प्रत्येक व्यक्ति हेतु अभीष्ट है, ताकि एक आदर्श समाज का निर्माण हो सके।

संदर्भ सूची

1. पञ्चतन्त्र - 1.34
2. वही – 4.49
3. वही, मित्रभेद, पृ - 6
4. वही, पृ - 79
5. वही, 3.102
6. शतपथ ब्राह्मण – 1.3.1.27 “सत्यं वै चक्षु”
7. बृहदारण्यकोपनिषद् – 5.4.1, “सत्यं ब्रह्मेति सत्यं ह्येव ब्रह्म”
8. सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
9. प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।। मनुस्मृति – 4.138
10. पञ्चतन्त्र - 1.130
11. अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परं तपः।
12. अहिंसा परमं सत्यं यतोः धर्मः प्रवर्तते।। महाभारत, अनुशासनपर्व – 115.23
13. पञ्चतन्त्र - 3.103
14. वही – 1.188
15. वही – 2.118
16. वही – 2.188
17. वही, लब्धप्रणाश, पृ - 490
18. वही, पृ - 497
19. वही – 3.53
20. वही, लब्धप्रणाश, पृ – 490

सन्दर्भ–ग्रन्थसूची

1. पञ्चतन्त्र: श्यामाचरणपाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली1980 ,
2. पञ्चतन्त्र: पं .रामचन्द्र झा चौखम्बा विद्याभवन , वाराणसी1994 ,
3. बृहदारण्यकोपनिषद्: निर्णयसागर प्रेस बम्बई1932 ,
4. मनुस्मृति: व्यासुरेन .डॉ .्द्र कुमारआर्ष साहित्य , प्रचारट्रस्ट1985 ,दिल्ली ,
5. महाभारत: दामोदर1972 ,पारडी ,स्वाध्यायमण्डल ,
6. शतपथब्राह्मण: सम्पा. डॉ चौखम्बा संस्कृत ,अल्बेर्तन . सीरीज आफिस1996 ,वाराणसी ,